॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

श्री दि० जैन मुनिस्वरूप

तथा

आहारदान-विधि

लेखकः—

श्री जियालाल जैन वैद्य

जौहरीनगर (मैनपुरी)

मूल्य ५० न०पै०

प्रथम संस्करण १०००

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रकाशक—
श्री जियालाल जैन वैद्य
जौहरीनगर (मैनपुरी)

जिओ और जीने दो !

अहिंसा परमो धर्मः यतो धर्मस्ततो जयः

सबकी सेवा करो !

मुद्रकः—
महावीर मुद्रणालय
अलीगंज (एटा)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्री जियालाल जैन वैद्य

जौहरीनगर (मैंनपुरी)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

लेखक की प्रार्थना

संसार अशान्तिका घर है। सुख–शान्ति प्राप्ति के लिये प्रत्येक जीव लालायित रहता है; परन्तु सुख-शांति किन्हीं मन्दकषाय वालों को ही प्राप्त होती है। जिन्होंने कषायों पर विजय प्राप्त कर लिया है, वे वीतराग हैं। पूर्ण सुखी हैं। अतःसुख-शान्ति प्राप्त करने के लिये मुमुक्षु को कषायों पर विजय प्राप्ति हेतु प्रथम ही षट्कर्मों का पालन आवश्यक है। जिसके पालन के लिये सत्पात्र को दान देना भी अति आवश्यक है। अस्तु इस पुस्तक "मुनि तथा आहार दान" में सद्पात्रको आहार देने की विधि बताने का प्रयास किया गया हैं। इस विषयपर हमारे अनेक आचार्यों, विद्वानों आदि द्वारा रचित अनेकों विशाल ग्रंथ हैं किन्तु यह पुस्तक लघु होते हुये भी श्रावक के हित में सिद्ध होगी ऐसी मुझे आशा है। इस अभिप्राय को मनमें धारण कर मेरी इच्छा दीर्घ काल से मुनि आहार विधि को भली भांति जानने की थी। अतः सतत प्रयत्न किया और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वृद्ध विद्वानों व अनेक शास्त्रों के आधार पर यह पुस्तक संग्रह की। आशा है कि सभी उदार धार्मिक पुरुष अपना कर्तव्य समझ इसके अनुसार आचरण करें। मैंने इस पुस्तक का संग्रह अपनी मान, बड़ाई, लोभ अथवा किसी अन्य दुरभिनिवेश के वश होकर नहीं किया, केवल अपने ज्ञानवर्धन अथवा कल्याण निमित्त किया है। इस पुस्तक का संशोधन श्रीमान पं० भगवत स्वरूप जी 'भगवत', धर्म मर्मज्ञ अनुभवी विद्वान द्वारा कराया गया है। मैं उक्त विद्वान का बहुत बहुत कृतज्ञ हूं कि जिन्होंने परिश्रम कर मेरी भावना को सफल बनाया।

यद्यपि इस पुस्तक के संग्रह करने में बहुत सावधानी रक्खी गई है तथापि बुद्धि की मन्दता एवं प्रमाद वश जो त्रुटियाँ ज्ञात हों वे कारण सहित सूचित करें, जिससे भविष्य में यह पुस्तक सर्वथा निर्दोष हो जाय।

जौहरीनगर
मैंनपुरी

विनीत—
जियालाल जैन वैद्य

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दो शब्द

श्रावक के षट् आवश्यक कर्मों में दान देना पुण्य कार्य है। दान भी चार प्रकार का होता है: अभयदान, ज्ञानदान, औषधिदान और आहारदान। दाता, द्रव्य और पात्र की अपेक्षा से दान की प्रकर्षता होती है। सत्पात्र को दान देने की अचिन्त्य महिमा है। देखो भ० ऋषभदेव को प्रथम पारणा कराने वाले राजा श्रेयांश भगवान से पहले ही मोक्षगामी हुए। शिक्षाव्रतों में अतिथि संविभाग अन्तिम व्रत है। अतिथि मुनिराज को आहार कराना महान पुण्यकार्य है ही और महाभाग्यवान ही इसे प्राप्त करते हैं। किन्तु खेद का विषय है कि सम्प्रति युग में न तो तीर्थंकर जैसे सत्पात्र के दर्शन ही होते हैं और न ही राजा श्रेयांस सदृश दाता ही देखने में आते हैं। शुद्ध द्रव्यों की सुलभता भी सुगम नहीं है। ऐसे विषम समय में कभी किसी मुनि, आर्यका, ऐलक, क्षुल्लक आदि का समागम हो जाये तो यह कठिनाई होती है कि किस प्रकार आहार दिया जाय? कहना न होगा कि प्रस्तुत पुस्तक में इसी समस्या का समा-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

धान है। लेखक महोदय ने एतद्विषयक ग्रन्थों व बृद्ध मनीषियों का सम्पर्क कर सम्बन्धित सामग्री का सञ्चयन किया है । विषय संक्षिप्त रूप में किन्तु स्पष्टता के साथ प्रस्तुत किया गया है । उस पर भी लेखक महोदय का सविनय निवेदन है कि कोई त्रुटि रह गई हो तो उसे उन्हें सूचित किया जावे ताकि आगामी संस्करणों में उसका परिहार किया जा सके।

आशा है जैन-जगत में इस पुस्तक से लाभ उठाया जायेगा। कृति के लिए लेखक महोदय को हार्दिक धन्यवाद।

विनीत—

वीरेन्द्र

प्र०सम्पादक 'अहिंसा-वाणी'

अलीगंज
१३-७-६५

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

❋ भूमिका ❋

चौरासी लाख योनियों में एक मनुष्य योनि ही ऐसी सर्वोत्तम योनि है कि जिसे प्राप्त कर यह जीव अपना उत्थान कर सकता है। यह मनुष्य योनि महान दुर्लभ है। इस योनि को पाकर भी इसमें पूर्णायु, इन्द्रिय पूर्णता, नीरोगता, उच्चगोत्र, सुकुल, सत्संग, सदाचरण, यह सब महान कठिनाई से मिलते हैं इनके मिलने पर भी सद्धर्म का मिलना तो विशेष दुर्लभ है। क्योंकि सद्धर्म हो संसार समुद्र से पार करने को नौका है। वैसे वस्तु का स्वभाव ही धर्म है यथा "वत्थु सहावो धम्मो" अतः जीव का स्वभाव भी धर्म रूप है, वह स्वभाव क्षमा, मार्दव आदि गुण रूप है जो कि आत्मा का अभिन्न अंग है। प्रत्येक वस्तु निज स्वभाव में ही रत है किन्तु जब उसमें कोई अन्य योग मिल जाता है, तभी वह विकार रूप हो जाती है। जैसे जल का स्वभाव शीतल है और शीतल ही रहेगा किन्तु अग्नि पर चढ़ाने से वह इतना तप्त रूप होता है कि दूसरों को भी जला देता है। इसी प्रकार जीव का स्वभाव भी सद्धर्म रूप है किन्तु क्रोधादि के निमित्त से अनेक विकार उसे पतनकी ओर ले जाते हैं। इन क्रोधादिक कषायों से बचने के लिए एवं अपने निज स्वभाव की प्राप्त के लिए जीव को धर्माचरण की आवश्यकता होती है। धर्म कोई कहने की और देखने दिखाने की वस्तु नहीं है, वह तो निज स्वभाव में लीन होंने और आचरण करने की चीज है। जिन सत्पुरुषों का संसार निकट है एवं जिनका भला होना है उनके ही भाव धर्माचरण के होते हैं। इस महान दुर्लभ मनुष्य जन्म को पाकर जो जीव इस महान कल्याणकारी आचरण से शून्य रहते हैं उन्हें पुनः पुनः संसार को चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करना पड़ता है। अनादि काल से यह जीव अपने निज स्वभाव को भूल चुका है यह भूल कुसंगति के कारण से हुई है, जब इसे थोड़ा सा भी इस भूल का ज्ञान होता है तभी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

यह अपने निज स्वभाव की खोज का प्रयत्न करता है, और धर्माचरण के सन्मुख होता है। आगम में आचार्यों ने धर्म के दो भेद किये हैं, एक मुनि धर्म, दूसरा गृहस्थ धर्म, यह व्यवहार रूप धर्म हैं इन पर चल कर हीं यह जीव अपने स्वभाव में लीन हो जाता है तब इसे निश्चय धर्म की प्राप्ति हो जाती है। सर्व प्रथम हमें व्यवहार धर्म पर ही चलना पड़ेगा: प्रस्तुत पुस्तक में विद्वान लेखक ने मुनि धर्म, और गृहस्थ धर्म का संक्षेप में स्वरूप समझाया है और खास तौर पर मुनि स्वरूप और आहार दान विधि का प्रतिपादन किया है। मोक्ष प्राप्ति के लिए जा भव्यात्मा सर्व परिग्रह का त्याग कर इन्द्रिय विषयों का दमन कर पूर्ण संयमी बनकर ज्ञान, ध्यान, तप में लीन हो जाता है उसे ही सद्गुरु की संज्ञा दी गई है, उसी वन्दनीय पुरुष पुङ्गव को "मुनिराज" कहा जाता है। ऐसे रत्नत्रय विभूषित महान तपस्वी पुरुष के शरीर-स्थिति रक्षणार्थ आहार जल देना ही आहार-दान है। यह अहारदान सद्गृस्थ के लिये नित्य देने योग्य है। आगम में सत्पात्र दान का फल भोगभूमि सुख, स्वर्गादिक सुख, अन्त में शिव सुख तक प्राप्त होना बतलाया है। सत्पात्र दान से परिणामों में निर्मलता आती है और निर्मलता आने से कषाय मन्द हो जाते हैं, कषायमंद होने से जीव अनन्त पुण्य संचय करता है, वह पुण्य बन्ध ही जीव को नाना प्रकार सुख का दाता है।

गृहस्थ अवस्था में रहते हुए जिनका हृदय उदार होता है और मन, वचन, काय की क्रिया सरल होती है, और जो जिनदेव, जिनागम, जेन गुरुओं में श्रद्धा रखता है, वह निरभिमानी पुरुष श्रावक कहलाता है। श्रावक को देव पूजा, गुरु सेवा आदि षटकर्म प्रतिदिन करना आवश्यक है। इस पुस्तक में सुगुरु स्वरूप एवं सत्पात्र दान विधि का वर्णन किया। लेखक श्री पं० जियालाल जी जेन वैद्य एक धार्मिक पुरुष हैं, आपके द्वारा एक पुस्तक "जेन पूजन विधि" नाम की पहले प्रकाशित हो चुकी है,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जिसमें आपने भगवान जिनेन्द्र की पूजन करने की पूर्ण विधि लिखी है वह पुस्तक भी धार्मिक सज्जनों को उपयोगी है।

प्रस्तुत पुस्तक "श्री दि० जैन मुनि स्वरूप तथा आहार दान विधि" भी धार्मिक भावना की द्योतक है तथा सुगुरु भक्ति भावना युक्त है। हम श्री १००८ जिनेन्द्रदेव से प्रार्थना करते हैं कि श्री वैद्य जी को सदैव सद्बुद्धि प्राप्त होती रहे, जिससे वह धर्म मार्ग में अग्रसर होते रहें। साथ ही हमारी दिगम्बर जैन समाज के गृही वर्ग से भी विशेष २ प्रेरणा है कि वह अपने पदस्थ योग्य जो धार्मिक कार्य हैं, उन्हें प्रमाद रहित नित्य करते रहें। देव पूजा, सुगुरु उपासना, स्वाध्याय, संयम, तप और दान यह प्रत्येक गृहस्थ को नित्य अनिवार्य करने चाहिये।

दोहा— पूर्व दान फल पुण्य से, हुये आज धनवान।
आगे भी वैभव मिले, अतः दीजिये दान॥
दान दिये धन ना घटे, बढ़ै कूप जल जेम।
जग में फैले कीर्ति बहु, घर में नित रहे क्षेम॥
विनय, भक्ति युत दान दो, नित सत्पात्र निहार।
दीन दुखी लखि दीजिये, दयाभाव मन धार॥
धर्म, जाति, औ' देश हित, लगै वही धन सार।
विना दान धनवान पर, भगवत् डारो छार॥

सुगुरु चरण सेवक—
भगवत्स्वरूप जैन "भगवत्"
सहायक मन्त्री
श्री दि० जैन अतिशय क्षेत्र
ऋषभनगर [मरसलगंज]
मु० पो० फरिहा (जिला मैनपुरी)

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	श्री मुनिस्वरूप	श्री दि० जैन मुनिस्वरूप
४	६	क	के
४	१४	से	में
४	३४	साध	साधु
५	१०	करना	करता
८	१८	करे	कर
६	१२	भावन	भाव न
१३	१६	काटो आदि	काटो मारो आदि
१६	१	पूरा	बूरा
१६	१४	धर्म	गर्म
१७	वर्तनों की शुद्धि में कुछ काँच के वर्तनों को नितांत अयोग्य भी मानते हैं।		
२०	२	होरने	हेरने
२०	१४	भोजन शुद्ध	भोजन जल शुद्ध

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

राजा श्रेयांस का तीर्थङ्कर श्री ऋषभदेव को आहार दान

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्री मुनिस्वरूप तथा आहार दान विधि

सच्चे गुरु

जिनमें पाँचों इन्द्रियों के विषयों के भोगने की इच्छा नहीं जो सर्व प्रकार के आरम्भों से रहित हैं जो लगोटी तक का भी परिग्रह न रख कर दिगम्बर मुद्रा के धारक हैं जो धर्म शास्त्रों को पढ़ने पढ़ाने व धर्म उपदेश देने तथा धर्म-ध्यान में ही मग्न रहते हैं। जो कर्मों की निर्जरा के लिये यथा शक्ति और निष्कपट उपवासादि रूप बाह्य तप और प्रायश्चितादि रूप अन्तरङ्ग तप को धारण करते हैं। समस्त प्राणियों का हित करने वाले शान्त स्वभावी जिनके कषायों की मन्दता है, अपने शरीर से भी ममत्व न रखने वाले और बाह्य धन धान्य वस्त्र आदि परिग्रह के पूर्ण त्यागी, यथार्थ आगम के अनुकूल भाषण करने वाले और आत्मीक ज्ञान और ध्यान में सर्वदा लीन रहने वाले ही यति मुनि अथवा सच्चे साधु (गुरु) कहे जाते हैं। यह अजाचोक वृत्ति के धारी, निर्विकारी, निर्लोभी, निष्कषाय होते हैं। शत्रु, मित्र, कांच, कञ्चन, में समान विचारधारी ही सच्चे गुरु हैं।

साधु के २८ मूल गुण

आगम में साधु के लक्षण इस प्रकार कहे हैं : जो पञ्चेन्द्रियों के विषयों से विरक्त आरम्भ परिग्रह रहित और ज्ञान ध्यान तप में लवलीन हो, वही साधु है। इस सिद्धि के लिये साधु को

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

निम्न २८ मूल गुण धारण करने पड़ते रहे हैं —पंच महाव्रत, ५ समिति, ५ इन्द्रियों का दमन,

सामायिकादि षटकर्म, केशलोच, अचेलक्य, अस्नान, भूमिशयन, अदन्तघर्षण, खड़े खड़े भोजन और एक भुक्ति—इन मूल गुणों को भलीभांति पालने से आत्मा के ८४ लाख उत्तर गुणों की उत्पत्ति होती है।

मुनि २२ परीषहों के विजयी होते हैं

क्षुधा तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशक, नग्नता, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, शय्या, आक्रोष, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृण-स्पर्श, मल, सत्कार, पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान और अप्रदर्शन इन परीषहों को आगम के अनुकूल जीतते हैं। दिगम्बर जैन साधु के तीन भेद आगम में बताये हैं। यथा आचार्य उपाध्याय और साधु-इन तीनों के लक्षण इस प्रकार है।

आचार्य परमेष्टी के लक्षण

संसार शरीर भोगों से विरक्त चित्त श्रावक को धर्म मार्ग में दृढ़ करते हुए उसकी शक्त्यानुसार वीतराग मार्ग में दीक्षित करना आगमानुकूल स्वयं पंचाचार पालना तथा संघस्थ सभी साधु वर्ग को प्रायश्चित आदि देकर उन्हें उनके पद पर स्थित करना धर्मोपदेश देना सदाचार सन्मार्ग का प्रचार करना ध्यानाध्ययन में लीन रहना यह आचार्य साधु छत्तीस मूल गुण धारी होते हैं।

शिष्यों को संग्रह करने में चतुर (समर्थ) श्रुत और चारित्र विषय आरूढ़ अन्य मुनियों को पांच प्रकार के आचार को अरचावे और स्वयं आचरण करे। किसी साधु का व्रत भंग हो जाय उसको प्रायाश्चित देकर शुद्ध कर देते है और दीक्षा देकर शिष्यों का हित करते हैं —ऐसे आचार्य होते हैं।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उपाध्याय परमेष्टी के लक्षण

ग्यारह अंग और चौदह पूर्वों को जानने वाले उपाध्याय कहलाते हैं।

ग्यारह अंगों के नाम— १- आचारांग २- सूत्र कृतांग ३- स्थानांग ४- समवायांग ५- व्याख्या प्राज्ञप्ति ६- ज्ञातृकथगांग ७- उपासकाध्ययनांग ८- अन्त कृद्दशांग ९- अनुत्तरोपपाद दशांग १०- प्रश्न व्याकरणांग ११- विपाक सूत्रांग।

दृष्टि वाद नाम अंग के पांच भेद— परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग पूर्वागत, चूलिका। अन्त का जो दृष्टिवाद अंग है वह श्रुत केवली के होता है, उपाध्याय के नहीं। यह उपाध्याय साधु पठन-पाठन में यहाँ लीन रहते हैं। यह पच्चीस मूल गुण धारी होते हैं।

चौदह पूर्वों के नाम— १- उत्पाद पूर्व, २- आग्रायणीय, ३- वीर्याभुवाद, ४- अस्ति नास्ति प्रवाद पूर्व ५- ज्ञान प्रवाद पूर्व ६- सत्य प्रवाद, ७- आत्म प्रवाद, ८- कर्म प्रवाद, ९- अत्याख्यान पूर्व, १०- विद्यानुवाद, ११- कल्याणवाद, १२- प्राणवाद १३- क्रियाविशाल, १४- त्रिलोक विन्दुसार पूर्व। इस प्रकार ग्यारह अंग और चौदह पूर्वों के ज्ञाता पुरुष उपाध्याय कहलाते हैं। वे संघ में मुनियों को पढ़ाते हैं उनको उपाध्याय पद आचार्यों द्वारा दिया जाता है।

तपस्वी [साधु परमेष्टी आठ भेद रूप हैं] के लक्षण

जो पर पदार्थों में निर्ममत्व रखते हैं, वही साधु तप कर सकते हैं। जिनको अपने शरीर से भी ममत्व नहीं हैं, वही साधु द्वादश प्रकार का तप तथा आतापन योग, वृक्ष मूल योग तथा अभ्रावकाश योग धारण कर कर्मों पर विजय प्राप्त कर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सदा के लिए सुखी हो जाते हैं। वे ही साधु धन्य गिने गये हैं। जो एक ग्रास, दो ग्रास एक उपवास पक्ष, मास, छै मास, एक वर्ष तक के उपवास करते तथा अंगुष्ठ का सहारा लेकर खड़े रहते हैं। उनको सिद्धांतों में तपस्वी कहा है।

शैक्ष के लक्षण

जो श्रुत ज्ञान के अभ्यास में अपनी आत्मा को लगाकर ज्ञान की वृद्धि कर मोक्ष में प्रवृत हो, जिससे संसार घटे और आत्म शक्ति बढ़े वही शैक्षों का कार्य है।

ग्लान के लक्षण

असाता आदि कर्मों के निमित्त से जिनका शरीर अनेक प्रकार के रोगों से ग्रसित क्लेश सहित है, परन्तु फिर भी रोगों के उपचार में जिनकी भावना नहीं है, वे मुनि ग्लान कहलाते हैं।

गण के लक्षण

जिनका अध्ययन करने से बहुत बढ़ा चढ़ा हो और महन्त (बड़े) मुनियों की गिनती हो सो गण कहलाते हैं।

कुल

वर्तमान आचार्यों की दीक्षा सहित जो शिष्य हो सो कुल कहलाते हैं।

संघ

चार प्रकार का संघ जैसे मुनि, आर्यका, श्रावक, श्राविका अथवा यति, मुनि, अनगार और साधु अथवा देव ऋषि, राज ऋषि, ऋद्धि ऋषि और ब्रह्म ऋषि इस प्रकार संघ कहलाता है।

साधु

जो मुनि बहुत काल से दीक्षित हो और जिसने बहुत प्रकार

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

के उपसर्ग तथा परीषह जीते हों और आर्त रौद्र परिणाम जिनके नहीं होते वह साधु कहलाते हैं।

मनोज्ञ

जिनका उपदेश लोक मान्य हो तथा जिनकी आकृति को देखकर लोगों के दिल में स्वयं पूज्यता के भाव पैंदा हों जाये और जैन मार्ग का गौरव रखते हों, श्रेष्ट वक्ता हों, महान कुलवान हों वे मनोज्ञ कहलाते हैं। उपरोक्त वह आचार्य उपाध्याय आदि दश भेद रूप जो दिगम्बर मुद्राधारी साधु हैं [मुनि हैं] उन साधुओं की वैयावृत्य जरूर करना चाहिये।

श्रावक का प्रथम कर्तव्य है कि वह अपने धर्म मार्ग दृष्टा गुरुओ की वैयावृत्य में सतत तत्पर रहे। अब श्रावकोचित षट् कर्मों (कार्यों) में से गुरुपास्ति और दान इन दा कर्मों पर ही प्रस्तुत पुस्तक में विचार करना है।

गुरुपास्ति

आचार्यों ने श्रावकों के प्रतिदिन करने योग्य १- जिनेन्द्र देव की पूजा, २- गुरुजनों की भक्ति, ३- उपासना शास्त्र स्वाध्याय, ४- संयम तथा योग्यतानुसार ५- तप, ६- दान और गुरुओं की उपासना यह छह आवश्यक क्रियायें नित्य करने योग्य बताई हैं। उनमें देव पूजा के समान ही "गुरुपास्ति" भी अत्यावश्यक है। जो पुरुष देव गुरु और धर्म की उपासना करना है, वह कभी दुःखी नहीं होता है। वह ऐहिक और पारलौकिक दोनों सुख प्राप्त करता हैं। इनकी उपासना करता हुआ व्याकुल नहीं होना चाहिये।

सुगुरु सेवा से ही जीव अपना कल्याण कर सकता है। संसार रूप अथाह समुद्र से पार करने को सुगुरु ही तारण तरण जहाज है। सुगुरु सेवा में दिया हुआ समय और द्रव्य वट बीज के वृक्षको तरह फलदायक होता है। अतः श्रावकों को गुरुपास्ति

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

[साधु सेवा] अवश्य २ करनी चाहिये ।

दान

दान चार प्रकार का होता है १- अहारदान, २- अभयदान ३- ज्ञानदान, ४- औषधिदान । हम यहाँ आहारदान पर विचार करेंगे । भक्ति सहित फल की इच्छा के विना मुनि, आर्यका, श्रावक, श्राविकाको जो अहारदान देता है, वह अत्यन्त कल्याण-कारी है । इस भव में यश की प्राप्ति होती है तथा अहारदान धर्मोपदेष्टाओं को देने से उनकी शरीर स्थिति रहती है । और शरीर स्थिति के कारण धर्मोपदेश के लाभ से आत्म-कल्याण की प्राप्ति होती है । जिनके घर से दान नहीं दिया जाता उस घर को आचार्यों ने श्मसान के तुल्य बताया है । अतः अपनी सामर्थ्यानुकूल अवश्य दान देना योग्य है । जिससे पुण्य बंध होकर भविष्य में सुख प्राप्त हो ।

नीतिकारों ने धन की तीन गति [दशा] बतलाई हैं । दान भोग, नाश । जो पुरुष दान नहीं देता, भोगभी नहीं करता उसके धन की तीसरी दशा होती है । यदि धन को दानादि में लगा-कर सफल नहीं किया जावे, तो धन सर्वथा दुःख का ही आश्रय है । धन दान देनेसे भी कभी घटता नहीं जब कभी घटता है, तो पाप के उदय से घटता है । जैसे कुए का जल पीने से कभी नहीं घटता । एवं विद्या कभी देने से नहीं घटती । पढ़ाने से वृद्धि को प्राप्त होती है । उसी प्रकार धन की दशा है । ज्यों ज्यों दान दिया जाता है, पुण्य की प्राप्ति होती है । अतः पुण्य के फल रूप धन बढ़ता है । कोई पूर्व का पाप उदय में आजावे तो उससे धन घट सकता है । अन्यथा दान देने से धन नहीं घट सकता । इस कारण हे भव्य जीवो मनुष्य जीवन को सफल बनाने के लिए दान अवश्य देना चाहिये । दान देते समय ध्यान रहे कि सद्पात्र को दान देने से ही पुण्य की प्राप्ति होती हैं । सत्पात्र में लगाया हुआ दान अच्छे स्थान में बोये हुये बीज के समान सफल

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

होता है।

सत्पात्र को श्रद्धा सहित, निज शास्त्र के अनुकूल ही।
आहार विधिवत दीजिये, करिये न किंचित भूल भी॥
धर्मज्ञ जो आये उन्हें, भोजन कराये चाव से।
भूखे अनाथों को खिलाये, नित्य करुणा भाव से॥

दाता के सात गुण

१- श्रद्धा, २- भक्ति, ३- संतोष, ४- विज्ञान, ५- क्षमा, ६- सत्व, ७- निर्लोभिता इन सात गुण युक्त दातार ही प्रशंसा के योग्य हैं।

श्रद्धा— आज मेरा अहो भाग्य है जो मेरे घर पर ऐसे वीतराग साधु पधारे जिससे मैं, मेरा कुटुम्ब आदि सभी सफल हो गये। मैंने अतिथि संविभाग का सौभाग्य पाया इत्यादि भाव होना श्रद्धा है।

२ भक्ति— ऐसा भाव नहीं रखना कि अमुक साधु आये अमुक नहीं आये। जो भी आये उसको भक्ति पूर्वक आहार देना भक्ति गुण है।

३ सन्तोष— स्वयं आहार देना जाने, दूसरा नहीं जाने सो घमंड नहीं करना चाहिये। यदि दूसरे घर साधू का अहार हो गया अपने घर पर नहीं हुआ इत्यादि रूप में असन्तुष्ट न होना। आहार का योग न मिलने पर भी संतोष रखना। इत्यादि।

४ विज्ञान— आहार देने की विधि को ठीक ठीक जानना ऋतु और पात्र की प्रकृति आदि जानकर योग्य वस्तुका आहार देना विज्ञान गुण है।

५ निर्लोभिता—दान देकर इस लोक तथा परलोक सम्बन्धी फल की वांछा नहीं करना।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

६ क्षमा– आहार देते समय यदि साधु को अन्तराय हो जावे या किसी विशेष कारण से पात्र विना आहार लिये घर से चला जावे, अथवा अन्य कोई कारग बन जावे तो क्रोध नहीं करना।

७ सत्व– साधु से मन, वचन, काय शुद्ध कहना पड़ता है। इसके लिये आहार के समय पूर्ण सत्यमय प्रवृति रखना, नव कोटि सत्य का पालन करना सत्य नाम गुण है।

आहार के समय दातार द्वारा नवधा-भक्ति

१- प्रतिग्रह (पडगाहना), २- उच्च आसन, ३- पाद प्रक्षालन ४- पूजन, ५- नमस्कार, ६- मन शुद्धि, ७- वचन शुद्धि, ८- काय शुद्धि और ९- आहार जल शुद्धि ये नव प्रकार की भक्ति कहलातीं हैं।

१ प्रतिग्रह– भो स्वामिन! नमोस्तु, अत्र तिष्ट तिष्ट। इस प्रकार वोल कर साधु को पडगाहना आहार ग्रहण करने के लिये प्रार्थना करना। यदि मुनि रुक जावे तो घरके भोतर लिवा जावे आगे आगे स्वयं चलना पीछे मुनि चल देवेंगे। उस समय पीठ देकर चल रहा है ऐसा दोष नहीं मानना चाहिये। क्योंकि पीठ देना वह कहलाता है कि पात्र तो घर पर आवे और आप मुँह फेर ले या देख करे पडगाहन न करे।

२ उच्च स्थान— मुनि को घर में लाने के बाद जीव जन्तु रहित शुद्ध स्थान (चौकी, कुर्सी आदि) ऊँचे स्थान पर बैठना कहे—हे स्वामिन उच्च स्थान ग्रहण कीजिये।

३ पाद प्रक्षाल— मुनि के पैरों को प्रासुक जल से इस प्रकार धोवे कि तलवे आदि सूखे न रहें।

४ पूजन— जल, चंदन आदि अष्ट द्रव्यों से अथवा समय पर एक दो जो भी द्रव्य हो उनसे पूजन करना। यदि पूजन का समय न हो तो निम्न प्रकार बोल कर अर्घ चढ़ाना चाहिये।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

"उदक चन्दन तंदुल पुष्पकैश्चरु सुदीप सुधूप
फलार्घकैः।
धवल मंगल गानरवाकुले निजगृहे मुनिराज-
महं यजे॥

यदि इस प्रकार भी नहीं बोलना आये तो "अर्चामि" कह कर द्रव्य चढ़ा देना चाहिये।

५ प्रणाम भक्ति पूर्वक भूमि पर जीव जन्तुओं को देखकर अष्टांग या पञ्चाँगन नमस्कार करना।

६ **मन शुद्धि**–प्रसन्न चित्त होकर ही आहार देना चाहिये। और मन में किसी प्रकार का विकार भावन रखना ही मन शुद्धि है।

७ वचन शुद्धि–सरलता पूर्वक सत्य, प्रिय, योग्य वचन बोलना वचन शुद्धि है।

८ काय शुद्धि–शरीर को स्नानादिसे शुद्ध कर,शुद्ध वस्त्र धारण करना परन्तु रंगीन वस्त्र नहीं हो तथा जीवों को गमनागमन से बाधा नहीं पहुँचे। किसी ही जीव को शरीर से विराधना न हो सावधानी रखना ही काय शुद्धि है। दातार को कम से कम दो वस्त्र पहनना ही चाहिये।

९ **भिक्षा शुद्धि**–आहार जल को शुद्ध ही त्यार करें परन्तु मुनि के निमित्त न बनाया गया हो। प्राशुक जल से भली प्रकार देख भाल कर भोजन तैयार करके रखना ही भोजन शुद्धि है।

साधुओं की वैय्यावृत्ति का फल

परम वीतराग जिनेन्द्र के मार्ग-रत साधु को प्रणाम करने से उच्च गोत्र बँधता है और उनको शुद्ध निर्दोष आहार देने से उत्तम भोग भूमि तथा देव गति के सुख एवं चक्रवर्ती पद की

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्राप्ति होती है। उपासना करने से यशोलाभ, प्रशंसा एवं प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। भक्ति करने से निरोगता और सुन्दर रूप जो देवों को भी दुर्लभ प्राप्त होता है। जैसे सनतकुमार चक्रवर्ती को प्राप्त हुआ था। उनकी स्तुति करने से स्वयं अनेक पुरुषोंसे स्तुत्य हो जाता है। जैसे रामचन्द्र, लक्ष्मण, नारायण, बलभद्र आदि ने स्तुत्य पद पाया था अतः ऐसे साधुओं की सदा सेवा भक्ति, परिचर्या और वैय्यावृत्ति करनी चाहिये यह श्रावक का मुख्य कर्म है।

मुनियों की शरीर रक्षा पर क्या क्या ध्यान देना चाहिये

१- साधू के पास जीव दया के उपकरण एवं साधन पीछी आदि समुचित है या नहीं।

२- मुनि के पास कमण्डलु ठीक है या नहीं।

३- मुनि कौन सा शास्त्र पढ़ते हैं। अथवा इनके पास शास्त्र है या नहीं एवं शास्त्र को साधु बदलना चाहते है या जीर्ण शीर्ण हैं। तो क्या नया लेना चाहते हैं।

४- साधुओं के ठहरने का स्थान समुचित है या नहीं।

५- यथायोग्य रोग की परीक्षा करना।

६- समयानुसार प्रकृति के अनुकूल परीक्षा कर आहार दान देना।

७- जहाँ पर व्रती पुरुष हो वहाँ पर सुशासन की व्यवस्था करना इसके अतिरिक्त आर्यिका के लिए साड़ी, ऐलक, क्षुल्लक, ब्रह्मचारी के लिए यथा योग्य वस्त्र, पुस्तक, कमण्डल, चटाई आदि की व्यवस्था करना।

गुरुओं के समीप त्याज्य क्रियायें

थूकना, गर्व करना, झूठा दोष आरोपण करना, हाथ

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ठोकना, खेलना, हँसना, गर्व करना, जँभाई लेना, शरीर मोड़ना, झूठ बोलना, ताली बजाना तथा शरीर के अन्य विकार करना, शरीर संस्कारित करना इत्यादि क्रियायें करना गुरु के समीप वर्जित है।

अधः कर्म दोष

ऊखली, चक्की, चूल्हा, परडा और बुहारी ये पाच सूना अर्थात हिंसा के स्थान हैं। यह गृहस्थाश्रित आरम्भ कर्म है। इसे अधः कर्म कहते हैं। यद्यपि यह दोष गृहस्थ के आश्रित ही है। अतः चौका, चक्की इन पर चंदोवा होना चाहिए तथा झाडू, ओखलीको किसी कपड़े आदि से ढक देना चाहिये। भोजन करने व बनाने दोनों स्थानों पर चंदोवा लगा होना चाहिये। चौका व भोजन करने के स्थान पर अँधेरा न हो। चौकेसे आहार का स्थान इतनी दूर पर हो कि वहाँ का पानी आदि के छींटे चौके में न जावें।

आहार से प्रथम निम्न बातों पर अवश्य ध्यान देना चाहिये

१- चूल्हे के भीतर अग्नि होती है। उस पर पानी भरा बर्तन ढका हुआ अवश्य रक्खा हो। धुँआं न होता हो।

२- चौके में कोई चीज उघाड़ी (खुली) न हो।

३- चौके में जो भी सामग्री या चौका, पाटा, आदि लगाये जावे हिलें डुलें नहीं।

४- भोजन के वर्तन में सचित्त वस्तु नहीं रखना चाहिये।

५- चौके में हर वस्तु धुली शुद्ध और साफ हो।

६- चूल्हे के ऊपर जो पानी रक्खा हो वह यति के भोजन के समय उबालना नहीं चाहिये।

७- जिन पदार्थों के गट्टे (टुकड़े) किये जाते हैं। जैसे पका

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

केला, आम, सेव आदि के गट्टे करके अग्नि पर गरम करने पर ही प्राशुक होते हैं।

८- चक्की, ऊखली, परण्डा (घिनोची) चौका तथा भोजनका स्थान इन पर चंदोवा अवश्य होना चाहिये।

९- यदि कोई दरवाजा बन्द हो तो खोले नहीं, यदि खुला हो तो बन्द नहीं करें।

१०- चौके आदि में कोई वस्तु घसीटें नहीं उठाकर देवें।

११-आहार देत समय कोई किसी का अनादर नहीं करें।

१२- आहार देते समय ऐसा शब्द नहीं कहना कि अमुक वस्तु आहार में नहीं देना ऐसा कहने से मुनि आदि अभक्ष समझ अन्तराय मानत हैं।

१३- जिनके हाथ धूजते (हिलते) हों उनको आहार नहीं देना चाहिये।

१४- आठ वर्ष से बड़े को आहार देना चाहिये।

१५- जिसके अंग कम हो, ऐसे मनुष्य को आहार नहीं देना चाहिये यदि उपांग कमती बढ़ती हो तो आहार नहीं दे सकते हैं।

१६- चौके में भोजन बिखरना नहीं चाहिये।

१७- यदि स्त्रीं या पुरुष एक ही कपड़ा पहिने हो तो साधु आहार नहीं लेते।

१८- भोजन साधु के ही निमित्त नहीं बनाना चाहिये।

चौका (भोजनालय) सम्बन्धी विचार

शुद्धाशुद्धि का वास्तविक ज्ञान न होने से बहुतों ने चौके को शुद्धता के विचार को ही उठा दिया है। चौके से स्वास्थ्य का घनिष्ट सम्बन्ध हैं। चौका जहां पर शुद्धता पूर्वक निर्विघ्न रूप से रसोई बनाई जा सके उसका नाम चौका है इस चौके में आचार शास्त्र के अनुसार १- द्रव्य शुद्ध, २- क्षेत्र शुद्ध, ३- काल शुद्ध, ४- भाव शुद्ध की आवश्यकता है। चारों शुद्धियोंकी स्थिति

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

में चौका वास्तविक चौका है।

१ द्रव्य शुद्धि—जितनी वस्तुएं भोजन सामिग्री चौके में ले जाई जावें उन्हें शुद्ध जल से धो लेना चाहिये पहनने के कपड़े भी शुद्ध होना चाहिये और हर वस्तु मर्यादा युक्त होना चाहिये चूल्हे में बोत्रो (घुनो) लकड़ी नहीं जलाना चाहिये तथा कण्डे नहीं जलाना चाहिये। क्योंकि गोबर शुद्ध नहीं होता। वह केवल बाह्य शुद्धि का काम दे सकता है। परन्तु रसोईम ले जाने योग्य नहीं है।

सारांश यह है कि चौका में भोजन बनाने के लिये जो सामग्री काम में लाई जावे वह सब श्रावक सम्प्रदाय के शास्त्रानुकूल आचार युक्त मर्यादित तथा शुद्ध होनी चाहिये।

२ क्षेत्र शुद्धि—जहाँ पर रसोई बनाने का विचार हो वहां पर निम्न बातों पर विचार रखना आवश्यक है।

रसोई घर में चंदोवा बंधा हो, हड्डी, मांस, चमड़ा, मृत प्राणी के शरीर, मल, मूत्रादिक न हो, नींच लोग, वेश्या, डोम आदि का आवास न हो। लड़ाई झगड़ा काटो आदि शब्द न सुनाई पड़ते हों। चौके में बिला पैर धोये नहीं जाना चाहिये। चौके की भूमि गोबर से नहीं लीपी जाय।

३ काल शुद्धि—जब से सूर्योदय हो और जब अस्त हो उसके मध्य का समय शुद्ध काल है। रात्रि में भोजन सम्बन्धी कोई कार्य नहीं करना चाहिये।

४ भाव शुद्धि—भोजन बनाते समय परिणाम संक्लेश रूप, आर्तरौद्र रूप नहीं होना चाहियें। क्योंकि भोजन बनाते समय यदि इस प्रकार संक्लेश भाव रहेंगे तो उस भोजनसे न तो शारीरिक शक्ति की वृद्धि होगी और न आत्मीक शक्ति की ही बल्कि उल्टा असर आत्मा पर पड़ेगा।

जैसे दीपक अन्धकार को खाता है और काजल को उत्पन्न

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

करता है। उसी प्रकार जैसा भोजन किया जाता है, उसी प्रकार की बुद्धि हो जाती है।

वस्त्र शुद्धि

चौके के अन्दर गीले कपड़े नहीं ले जाने चाहिये, क्योंकि आचार्यों ने उसको चमड़े के समान बताया है। उसमें शरीर की गर्मी तथा बाहर की हवा लगने से अन्तमुहूर्त में अनन्त सम्मूर्छन निगोदिया जीव उत्पन्न होते रहते हैं। और वे स्वांस के १८ वें भाग में उत्पन्न होकर मरते हैं। अत: अधिक हिंसा का पाप लगता है। इस कारण चौके में कभी गीला कपड़ा पहन कर नहीं जाना चाहिये इसी भांति विलायती रंग से रंगा हुआ कपड़ा भी चौके में नहीं पहनना चाहिये। क्योंकि रंग अपवित्र है। चौके में वस्त्र शुद्ध और स्वच्छ होना चाहिये।

टूटी (नल) के जल का निषेध

नल में अनन्त काय जीवों का कलेवर होने से यह चलित रस हो जाता है। क्योंकि नल में पानी ठण्डा और गर्म रूप से रहता है। इस कारण दोनों के मिश्रित रहने के कारण जीवोत्पत्ति मानी गई है। यही कारण है कि नल के पानी का त्याग करना चाहिये। नदी, कुआं, झरना और सोते का पानी पीने योग्य है। जिस जल में गन्ध आने लगे यह जल पीने योग्य नहीं।

कण्ड़े

गोबर के छाणे (कण्डे) चौके में ले जाने योग्य नहीं क्योंकि यह पशु का मल है व इसमें त्रस राशि उत्पन्न होती है। इसलिये महान हिंसा होती है। आयुर्वेद में कहा है कि जमीन को गोबर से लीपने पर ६ इंच तक के जीव उसके खार से नष्ट हो जाते हैं। ऐसा होने से वहाँ से वहां पर रहने वाले नीरोग्य रहते है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसी कारण जैनाचार्यों ने भी गोबर को लौकिक शुद्धि में स्थान दिया है। परन्तु चौके के लिए नहीं।

सचित्त को प्रासुक करने की विधि

आग से गर्म किया हुआ जल, दूध आदि द्रव्य, नमक, खटाई से मिला हुआ यन्त्र से छिन्न भिन्न किया हुआ हरित काय प्रासुक है। जल को प्रासुक करने के लिये गर्म करने के बाद हरड़, आंवला, लोग या तिक्त द्रव्यों को जल प्रमाण से ६० वें भाग मिलाना चाहिये। ऐसा प्रासुक जल मुनियों के ग्रहण करने योग्य होता है।

भोजन के पदार्थों की मर्यादा

जैनधर्म के आचार शास्त्र में तीन ऋतुएं मानी हैं। प्रत्येक ऋतु का प्रारम्भ अष्टाह्निका की पूर्णिमा से होता है। वह चार मास तक रहता है। यही पूर्वाचार्यों का सिद्धान्त है।

१ शीत ऋतु—अगहन (मार्गशार्ष) वदी १ से फागुन सुदी १५ तक।

२ ग्रीष्म ऋतु—चैत वदी १ से आषाढ़ शुक्ला १५ तक।

३ वर्षा ऋतु—श्रावण वदी १ से कार्तिक शुक्ला १५ तक।

इन ऋतुओं के अनुसार आटा की भिन्न २ मर्यादा होती है। दूध की मर्यादा—प्रसव के बाद भैंस का १५ दिन, गाय का १० दिन, बकरी का ८ दिन बाद शुद्ध होता हैं। दूध दुहने के २ घड़ी के भीतर छानकर गर्म कर लना चाहिये। अन्यथा अभक्ष हो जाता है। गर्म किये हुए दूध की मर्यादा ४ पहर है। नमक की मर्यादा पीसने के बाद ४८ मिनट तक है।

आटा, वेसन, मसाला तथा पिसी हुई चीजोंकी मर्याया शीत ऋतु में ७ दिन है वूरा की मर्यादा १ माह तथा ग्रीष्म ऋतु में ५ दिन व वूरा १५ दिन व वर्षा ऋतु में पिसी चीजों की मर्यादा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

३ दिन पूरा ७ दिन दही मर्यादा युक्त दूध में जामन दिया गया है। तभी से दही की मर्यादा ८ पहर को समझना चाहिये।

छाछ की मर्यादा—दही को मर्यादा के अन्दर ही छाछ बना लेना चाहिये अत्यन्त गर्म जल डालकर बनाई हुई छाछ ८ पहर कुछ गर्म जल डाल कर बनाई हुई छाछ ४ पहर व शीतल जल से बनीं छाछ की मर्यादा २ पहर की होती है।

घी-नैनी (लूनी) निकाल अन्तमु हूर्त में तपाकर घी बना लेना चाहिये। ऐसा घी जब तक चलित रस न हो तब तक कार्य में लेना चाहिये, उक्त घी जब तक गन्ध न बदले तब तक मर्यादा युक्त।

तेल की मर्यादा गन्ध न बदले तब तक की है।

दही में गुड़, शक्कर मिलने पर उसकी मर्यादा एक मुहूर्त है।

जल—कुआं, बावड़ी, नदी आदि के जल को छानकर उपयोग में लाने के लिए २ घड़ो की मर्यादा हैं। घर्म जल १२ घंटे तथा खूब उबला जल ८ प्रहर की मर्यादा है।

बनाई हुई वस्तुओं की मर्यादा

१- पानी से बनी दाल, भात, कढ़ी जो आमचूर आदि द्रव्य से बनो हो, खिचड़ी एवं झोल वाला शाक आदि तथा सचित्त जल, मठ्ठा आदि पदार्थों की दो पहर मर्यादा है।

२- रोटी, पूड़ी, हलुआ, माल पुआ, खीर, अचार, मगोड़ी दाल बड़े आदि की चार पहर मर्यादा है।

३- सुखाकर तली हुई पूड़ी, शक्कर पारे, खाजा, बूंदी, खोया की मिठाई गुलाब जामुन आदि ८ पहर मर्यादा है।

द्विदल

जिन पदार्थों की (अनाज) दो दालें (फाडें) होतीं हो ऐसे अन्न को (मूंग, ऊड़द, चना आदि) या काष्ट को (मेथी, लाल मिर्च के बीज, भिण्डी, तोरई, आदि के बीजों को) दूध, दही और छाछ में मिश्रित करना आचार्यों ने द्विदल कहा है। उक्त

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

द्विदल का जीभ के साथ सम्बन्ध होने पर त्रस जीव पैदा होते हैं। इसलिए त्रस हिंसा का पाप लगता है। आयुर्वेद के विद्वान आचार्यों ने कहा है कि यदि इस प्रकार के पदार्थों का सेवन किया जावे तो महान भयंकर रोगों की उत्पत्ति होती है।

वर्तनों की शुद्धि

कांसे का वर्तन अपनी जाति के सिवाय अन्य के काम में नहीं लाना चाहिये, पीतल के वर्तन इनको मद्य, मांस भक्षी आदि को नहीं देना चाहिये। घर में यदि रजस्वला स्त्री से सम्पर्क हो जाय तो अग्नि से गर्म कर लेना चाहिये, रांगा तथा लोहे के वर्तन— इनको कांसे के समान जानना। अन्य धातु के वर्तन पीतल के वर्तनों के समान जानने चाहिये।

मिट्टी के वर्तन—इन्हें चूल्हे पर चढ़ाने के बाद दुवारा काम में नहीं लावे तथा पानी भरने के वर्तनों को आठ पहर बाद सुखा लेना चाहिये।

कांच के वर्तन—मिट्टी के वर्तनों के समान जानना।

पत्थर के वर्तन—इनको प्रयोग कर जल से धोकर सुखा लेना चाहिये तथा दूसरों को नहीं देना चाहिये।

काष्ट के वर्तन—इन्हें पत्थर के समान जानना।

विशेष जिन वर्तनों पर कलई हो उन्हें टट्टी पेशाव के लिये नहीं ले जाना चाहिये।

साधुओं को आहार देने वाले चौके में स्टील के तथा लोहे के वर्तन [तवा, करछली, फूंकनी, चिमटा, सड़सी आदि को छोड़कर] नहीं होना चाहिये। यद्यपि स्टील का वर्तन विशेष

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कीमती तथा विशेष स्वच्छ है फिर भी लोहे का [शुद्ध लोहे का] होने के कारण जिनेन्द्र पूजन तथा मुनि आहार दान के समय बरतने योग्य नहीं है।

अतिथि

अतिथियों को लौकिक कार्यों से कोई प्रयोजन नहीं रहता। वे आत्मध्यान रत ही रहते हैं। उनको जो भोजन दिया जावे वह शुद्ध मर्यादित अपने कुटुम्ब के लिए बनाया गया हो उसमें से ही दिया जावे इसी का नाम अतिथि संविभाग व्रत है। मुनि के भोजन के लिए खास तौर पर आरम्भ नहीं करना चाहिये। मुनियों को आहारदान करने से गृहस्थ को जो भोजन बनाने में आरम्भिक हिंसा लगती है, उससे उत्पन्न पाप नाश होता है।

आहार दान देने की विधि

रसोई—मर्यादा युक्त शुद्ध भोजन पदार्थ बनाकर किसी पाटला आदि पर रख दे। ध्यान रहे कोई भी वस्तु हिलती डुलती न हो तथा चूल्हे की अग्नि शान्त कर उसके ऊपर पानी का भरा वर्तन रख ढक देवे तथा भोजन बनाने वाली स्त्री अथवा पुरुष शान्ति भाव हो चौके में बैठ जावें।

भोजनालय—भोजन स्थान जहाँ पर भोजन कराना हो वहाँ पर मुनि के लिए मेज जो खडे होने पर टुण्डी तक ऊँची हो रखे तथा नीचे एक तसले में घास रखकर मेज के पास एक कोने पर रख देवे घास इसलिये रखना आवश्यक है कि साधु खड़े होकर अंजुलि में ग्रास, जल आदि लेते हैं। वह उसी तसले के सीध पर अंजुलि बांध खड़े हो जावेंगे। जल आदि जो भी वस्तु

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नीचे गिरेगी वह उसी तसले में घास के ऊपर गिरती जावेगी इससे छींटे आदि इधर उधर नहीं गिरेंगे ग्लानि, आदि नहीं होवेगो। क्षुल्लक, आर्यिका, आदि के लिये भोजन स्थान में बैठने के लिये एक पाटला तथा सामने चौकी उसके पास में तसला जिसमें सूखी घास रक्खी हो रक्खे क्योंकि यह लोग भोजन बैठ कर करते हैं।

जब अतिथि चौके में आ जावे तब भोजन सामग्री रक्खे। साधु जाप आदि करके पीछे छोड़ देवेंगे। पीछे श्रावक को हाथ में लेकर यथा योग्य स्थान पर रख देना चाहिये ध्यान रहे चलते फिरते कोई सामान रखते जीव हिंसा न होने पावे न कोई व्यर्थ की आवाज, अपवाद न होने पावे।

एक स्थान पर पाटला रख कर उस पर एक लोटे में प्राशुख जल अपने हाथ पैर धोने के लिये रख ले तथा अष्ट द्रव्य या अर्घ्य बनाकर रख ले तथा एक लोटे में जल भर कर उस पर नारियल आदि फल रख कर छन्ना (वस्त्र) से लपेट कर जाप (माला) लपेट लेवें यह साधु को पडगाहन के समय दोनों हाथ में लेकर खड़ा होवे। तथा एक कुर्सी रखे उसके नीचे साधु के पैर रखने के लिये एक पाटला रख दे तथा यहाँ पर एक तसला होना चाहिये क्योंकि पैर धोने का जल जमीन पर न गिरने पावे। श्रावकों को ध्यान रखना चाहिये कि जब साधुओं के भोजन का समय हो उस समय अपने घर में तिर्यञ्च होवे तो उसको ऐसे स्थान पर रखे जिससे साधु को किसी प्रकार का उपद्रव न करे आंगन में या चौके में उस समय गीला नहीं होना चाहिये तथा हरित काय की घास पत्ते बिखरे हुये नहीं होना चाहिये।

दातार को नित्य भोजन समय रसोई तैयार करके सब आरम्भ त्याग भोजन सामग्री शुद्ध स्थान पर रखकर प्राशुक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जल से भरा हुआ लोटा जो फल आदि से ढका हो छन्ना व माला लपेट अपने द्वार पर पात्र होरने के लिए णमोकार मंत्रका ध्यान करते खड़ा होना चाहिये। जब मुनि द्वार के सन्मुख आवे तो "हे स्वामिन ! अत्र तिष्ट-तिष्ट अन्न जल शुद्ध है।" ऐसा कहकर आदर पूर्वक अपने गृह में अतिथि को प्रवेश करावें। आगे आगे स्वयं चले पीछे पीछे अतिथि चलें इसको प्रतिग्रहण या पड़गाहन कहते हैं। पश्चात घर में पात्र को उच्च स्थान (पाटला, चौकी, कुर्सी आदि) पर कहे "स्वामिन विराजिये" स्वयं उक्त लोटा अन्य पाटला आदि पर रख देवे। बाद को, अयन्त्र रखा प्राशुक जल उससे अपने पैर शुद्ध करे। और जिस लोटे से मुनि को पड़गाहन करके लाये उस पानी से मुनि के पैंर धोवे (अङ्ग पोंछे) बाद को अष्ट द्रव्यसे पूजन करे दाँयेंसे वांयें परिक्रमा देवे। परिक्रमा ३वार देना चाहिये। अष्टांग नमस्कार करे धोक देवें। बाद को हाथ जोड़कर कहे "मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि, भोजन शुद्ध है भोजन शाला में प्रवेश कीजिये" इसी भाँति स्त्री अथवा पुरुष जो चौके में होवे वह भी कहे। इस प्रकार नवधा भक्ति एवं शुद्धि पूर्वक सर्व प्रकारके भोजन पदार्थ पृथक पृथक कटोरी में रखकर थाली में लेकर भोजन शाला में लगी मेज पर लगावे सन्मुख खड़ा होवे आहार देने से प्रथम हर वस्तु को बतला देवे कि अमुक अमुक वस्तु अमुक रीत्यानुसार त्यार की गई तथा इसमें अमुक अमुक द्रव्य सम्मिलित है। जिस द्रव्य को मुनि पृथक करने का संकेत करे उसे पृथक रख देवे जब मुनि हाथ से पीछी छोड़ देवे, और हस्ताञ्जलि बांध लेवें प्रथम प्राशुक जल देवें वाद को अन्न आदि के ग्रास बनाकर हाथमें देते जावें।(विद्वानों का कथन है) कि अन्न का एक ग्रास देने के बाद जल का एक ग्रास देवें। ग्रास देते समय मुनि हस्तांजलि बन्द कर लेवें तो वह द्रव्य नहीं देवें। यदि कोई विशेष वस्तु है, तो उसका संकेत कर देवे यदि मुनि अंजलि खोल देवे तो दे देवें अथवा विशेष आग्रह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नहीं करना चाहिये। जब भोजन कर चुके और ग्रास हस्त में न ले तब जल का ग्रास देवें। अन्त में उनका हाथ-मुँह आदि शरीर धो देवे और पोंछ कर साफ कर देवे। और विनय पूर्वक उच्च आसन पर बैठने का व धर्म उपदेश देने का आग्रह करें। मुनि के कमण्डलु को साफ करके प्राशुख जल भर देवे।

यह बात ध्यान में रहे कि मुनिराज या उत्कृष्ट श्रावक के पधारने व भोजन कर लेने के समय तक घर में दलना, पीसना रसोई बनाना आदि कोई भी आरम्भ सम्बन्धी कार्य तथा अन्तराय होने सम्बन्धी कार्य न होने पावे। यदि कमण्डलु पीछी या शास्त्रकी आवश्यकता दीखे तो बहुत आदर एवं विनय पूर्वक देवें।

आर्यका भी उत्तम पात्र है। वे बैठकर मुनि की भांति कर पात्र में (अंजलि बाँधकर) ही आहार करतीं हैं। सो उनके योग्य भोजनालय में बैठने को पाटला तथा सामने एक चौकी जिस पर भोजन सामिग्री रख मुनिकी ही भांति आदर-भक्ति पूर्वक आहार दान करे। पीछी, कमण्डलु, सफेद साड़ी, शास्त्र की आवश्यकता हो तों विनय पूर्वक देवें।

मध्यम पात्र ऐलक बैठ कर-पात्र में और क्षुल्लक पात्र में लेकर भोजन करते हैं

ऐलक भी आर्यकाओं की भाँति करपात्रमें (अंजुलि बांधकर) अहार करते हैं। इन्हें भी भक्ति सहित देवें। क्षुल्लक पात्र में आहार करते हैं। क्षुल्लक दो प्रकार के होते हैं। एक वर्ण क्षु० दूसरे अवर्ण (स्पर्श शूद्र) वर्ण क्षुल्लक वह होते हैं। जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य यह पीतल का पात्र (कमण्डलु) रखते हैं। और दूसरे अवर्ण (स्पर्श शूद्र) क्षुल्लक लोहे का पात्र(कमण्डलु) रखते

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

रखते हैं। कारण कि भोजन के समय पर जाति पूँछना उचित नहीं है। अतः महान पुरुष आचार्योंने इस रूप उनके चिन्ह कायम कर दिये हैं। जिससे बिना कहे ही उनकी पहचान हो जावे, अविनय का कारण नहीं बने। इनमें वर्ण क्षुल्लक को चौके में बैठाकर और अवर्ण क्षुल्लक को योग्यता के साथ ऐसे स्थान पर बैठावें जो चौके से बाहर हो पर अपमान जनक नहीं हो। यह क्षुल्लक निश्चल बैठकर अपने हाथ रूपी पात्र में या अपने वर्तन में अपने आप भोजन करते हैं।

क्षुल्लक भी उद्दिष्ट (अपने लिये बनाये हुए) आहारके त्यागी हैं) और आंरम्भ परिगृह के त्यागी हैं। कषायोंकी पूर्ण मन्दता न होने से लँगोटी तथा खण्ड वस्त्र धारण किये हुये हैं। इन्हें भी आहार विनय युक्त होकर भक्ति भाव से देवे। यह उत्तम श्रावक है यह कभी भी बिना आदर विनय युक्त बुलाये अपने आप कभी भी किसी कार्य के लिये श्रावक के घर नहीं जाते हैं। भोजन की बेला के समय ही मौन धारण करके श्रावकों के घरों की तरफ घूमते हैं आदर विनय युक्त वचन सुनकर ही श्रावकके पीछे२ उसके घर जाते हैं। श्रावक कहता है इच्छामि२ विराजिये शुद्ध आहार है ग्रहण कीजिये। यह भी रस त्यागकर भोजन करते हैं और भोजनोपरान्त हो मौन खोलते हैं।

ऐलक क्षुल्लक के समान ही सर्व क्रियाओं का करने वाले दूसरा भेद ऐलक का है। परंतु इनमें यह विशेषता है कि यह अपने शिर व दाढ़ी मूंछोंके वालों का लोच करते हैं। सिर्फ एक लगोटी के पराधीन है। मुनियों के समान मोर की पिच्छी आदि संयमोपकरण रखते है। और इनकी आर्य संज्ञा हे। ऐलक-ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य इन तीनों वर्णों में स ही होते है।

ऐलक भोजन क्रिया

ऐलक बैठकर दातार द्वारा दिये हुए भोजन को भले प्रकार

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

से शोधकर के जीमते हैं। खड़े होकर भोजन लेने की सम्मति शास्त्रों में मुनियों के लिये ही है। श्रावक अवस्था में खड़े होकर आहार लेना मुनि मार्ग का उपहास करना है। इसीलिये ग्यारह प्रतिमा धारी श्रावकों को चाहिये कि वह भोजन करे तब प्राण जाते भी खड़े भोजन न करें।

एक हाथ ग्रास धर, एक हाथ में लेय।
श्रावक के घर बैठकर, ऐलक असन करेय ॥

यह कथन भी हाथ के ऊपर धर कर एक हाथ से बिना अंजुलि लगाये बैठकर शान्ति से भोजन करना कहता है।

इन लोगों को ग्यारह प्रतिमा रूप व्रत है और यह श्रावकोत्तम गृह त्यागी आरम्भ परिगृह रहित (लंगोटी छोड़कर) पूज्य पुरुष है इन्हें भी इच्छामि २ कहकर शुद्ध भोजन दें। भोजन समय पधारो महाराज कहकर विनय युक्त होकर सम्मान पूर्वक भक्ति सहित आहार देवें।

व्रती किनके यहां आहार नहीं करते

जो नृत्य आदि गाकर जीविका करने वाला हो जैसे गन्धर्व लोग या तेल अर्क आदि बेचने वाले या नीच कर्म से आजीविका करने वाले हों, माली अर्थात पुष्प आदि बेचने वाले, नपुंसक हो, वेश्या हो, दीन हो, कृपण हो, सूतक वाला, छीपा का काम करने वाला, मद्य पीने या बेचने वाले या संसर्गी हो आदि इनमें से कोई व्यक्ति हो उनके सम्बन्ध से यानी समान आचरण करने वाले—ऐसों के यहाँ संयमी लोग भोजन नहीं करते। विधवा विजाति विवाह करने वाले, वर्ण शंकर, नीच कुल में उत्पन्न

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पुरुष या स्त्री, रजस्वला स्त्री, तीन मास से अधिक गर्भवती स्त्री, धूम्रपान करने वाला पुरुष या मद्य मांस मधु भक्षी पुरुष, वेश्यागामी, रोगी, अतिवृद्ध पुरुष जातिच्युत पुरुष, दुराचारी पुरुष आदि आचार मलिन पुरुषों के यहाँ आहार नहीं लेते हैं।

अतिथि संविभाग व्रत के पांच अतिचार

१- सचित्त निक्षेप २- सचित्त विधान ३- परव्यपदेश ४- मात्सर्य ५- कालातिक्रम। यह भगवान उमा स्वामी तथा समंत भद्र स्वामी के वचनानुसार अतिथिसंविभाग के पाँच अतिचार हैं।

१- सचित्त निक्षेप—सचित्त कहते हैं चेतना सहित जो वस्तु हो उस वस्तु से सम्पर्क मिलाना अतिचार है। जैसे पेड़ से तोडे हुये पत्र कमलादि के पत्र सचित्त हैं तथा जबकि गीलेपन का सम्पर्क है: पृथ्वी (गीली मिट्टी) धान्य आदि तथा खरबूजा, ककड़ी, नारंगी, केला, आम, सेव आदि के चाकू से गट्टे तो बना लिये हो परन्तु उसमें कोई तिक्त द्रव्य नहीं मिलाया हो और न उनको गर्म किया हो ऐसे पदार्थ सचित्त हैं। उनको त्यागी लोग नहीं ले सकते। पदार्थों के गट्टे या नीबू के दो पले करके ही अचित्त पना नहीं आ सकता, क्योंकि वनस्पति के शरीर की अवगाहना आचार्यों ने असंख्यातवें भाग मानी हैं। और वह जो गट्टा किये हैं वह बादाम के बराबर बड़े हैं जो कि विना अग्नि पर चढ़ाये या यन्त्र से पेले विना अचित्त नहीं हो सकते। जैसे सोठे (गन्ना) का रस निकाले या पत्थर से चटनी बांटे ऐसे किये विना जो लेता या देता है, वह अतिचार माना है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

२-सचित्त विधान— आहार में किसी प्रकार को सचित्त वस्तु का सम्बन्ध मिलाना। जैसे गीले सचित्त फल, फूल, आदि का संयोग या ऐसे पदार्थों से भोजन का ढकना, सचित्त विधान अतिचार माना है। ऊपर लिखे पदार्थ आहार में देने योग्य नहीं।

३- परव्यपदेश — अपने गुड़ शक्कर, आदि पदार्थों को किसी अन्य का बताकर दे देना अथवा दूसरे के मकान पर जाकर उसकी आज्ञा के विना कोई वस्तु निकाल लाकर आहार में दे देना यह परव्यपदेश नामका अतिचार है। क्यों कि विना आज्ञा दूसरा दूसरे के पदार्थों को दे ही नहीं सकता और वह दे रहा है, सो अतिचार है।

४-- मत्सर— मुनियों की नवधा-भक्ति में क्रोध करना आदर सत्कार नहीं करना अथवा अन्य दातार के गुणों का सहन नहीं करना। अन्य दातरों से ईर्ष्या भाव करने को मत्सर भाव कहते हैं।

५- कालातिक्रम— साधु के योग्य भिक्षा के समय को उलं-घन करना कालातिक्रम है।

ये पांचों अतिचार यदि अज्ञान से या प्रमाद से होवे तो अतिचार है। जान बूझकर करे तो अनाचार हैं। इसलिये ऐसे भावों से सदैव वचना चहिये। इस प्रकार अतिथि संविभाग के अतिचारों को टालकर दान देना गृहस्थों का कर्तव्य है।

श्रावकों के षट् कर्त्तव्य

१- देव पूजा, २- गुरु पासना, ३- शास्त्र स्वाध्याय, ४- संयम धर्म का पालन ५- तपश्चर्या, ६- पात्र दान। देव पूजा प्रभृति षट् धार्मिक क्रियाओं का अनुष्ठान करना प्रत्येक श्रावक का दैनिक कर्तव्य है। इनके पालन किये बिना कोई गृहस्थ नहीं कहला सकता। जैसे शरोर मे किसी अंग की कमी रहने से विकलाङ्ग

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कुरूप प्रतीत होता है उसी प्रकार इनको न पालने पर धर्म अपूर्ण रहता है। कहा है—"धर्म एव हतोहन्ति" "धर्मोरक्षाति रक्षितः" अर्थात धर्म क्रियाओं को न पालनसे जीवन दुखी रहता है और धर्म की रक्षा से जीवन सुखी रहता है।

माता, पिता, विद्या-गुरु और आचार्य को गुरु कहते हैं। इनको प्रणाम करना, इनकी आज्ञा मानना तथा सेवा भक्ति को गुरु पूजा कहते हैं। अथवा जो सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र तथा तप आदि आत्मिक गुणों में बड़े हो पूज्य हो उनको गुण गुरु कहते हैं। ऐसे महापुरुषों को सेवा भक्ति करना गुण गुरुओं को पूजा कहलाती है। उक्त गुरुओं तथा गुण गुरुओं की भक्ति पूजा करने वाला गृहस्थ धर्म का अधिकारी है।

अहिंसा, सत्य, अचौर्य आदि व्रतों को पालने वाले त्यागी व्रती, साधु आदि तथा शास्त्र के ज्ञाता विद्वानों एवं माता, पिता आदि हितैषियों की सेवा भक्ति करना विनय कहलातो है। चारित्रवानों की विनय करने से पुण्य की प्राप्ति,विद्वानोंकी विनय करने से शास्त्रोंके रहस्य का ज्ञान और माता, पिता आदि हितैषियों की विनय करने से सज्जनता, कुलीनता का परिचय और सब विनय करने का फल है।

जो श्रावक प्रतिदिन भगवान अर्हन्त का पूजन करता है। और द्रव्य क्षेत्र, काल और भाव की योग्यतानुकूल मुनियों को आहार दान करता है, वह नियम से सम्यग्दृष्टि श्रावक कहा जाता है और वह श्रावक धर्म मार्ग लीन होने से अतुल पुण्य बन्ध करता है। पुण्य के फल से नरेन्द्र, खगेन्द्र, सुरेन्द्र आदि सुख प्राप्त करता है पुनः मोक्ष मार्ग में रत रहता हुआ परम्परा से मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Contact for
order
Call and
whatsapp
9993602663
7722983010

9993602663

पीतल डिब्बा सेट

9:21

Like   Share

8

Like   Share

10"
11"

MILTON
REDMI NOTE 5 PRO
MI DUAL CAMERA

जैन मन्दिर गली न. 2 कैलाश
श्रीमती आभा जैन राकेश जैन

WEIGHT g
654.0
STAND BY
STABLE
NET
Essae

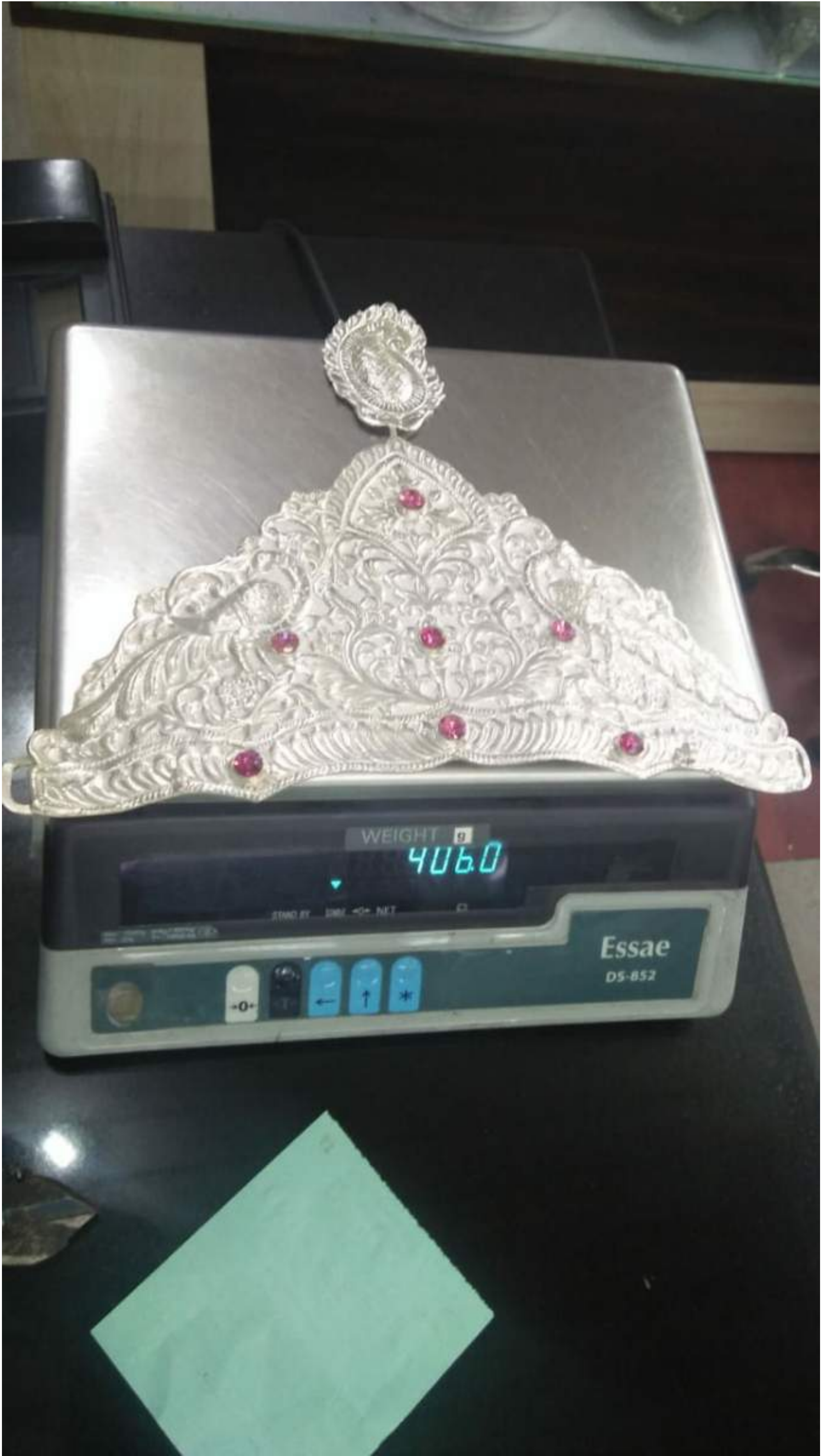
WEIGHT g
406.0
Essae
DS-852

WEIGHT
3450
Essae
DS-852

WEIGHT
42040
Essae
DS-852

REDMI NOTE 5 PRO
MI DUAL CAMERA

5/03/03